

# मैथिली-धूर्तसमागम

ज्योतिरीश्वर कविशेषराचार्य

( जोतिक कवि )



# मैथिली-धूर्तसमागम

स्नातकः (सक्रोधं संस्कृतमाश्रित्य) — [ श्री १३ क ]

नो जानाति कुलीनमुत्तमगुणं सत्त्वान्वितं धार्मिकं  
नाचारप्रवणं न कार्यकुशलं न प्रज्ञयालङ्कृतं ।  
नीचं क्रूरमपेतसत्त्वसहृदयं यस्मादियं सेवते  
तत्त्वं सानुगुणः पयोधिसुतया लक्ष्म्या प्रमाणीकृतः ॥

अरे णट्टपरलोत्रा दुट्टवम्भणा ईदिसे  
दूसहमज्झणहे पठमं तुमं महाधणं भेक्खिअ कुदो अण-  
दो गदुअ अम्हेहिं भिक्खा पत्थिदव्वा ।

॥ विभासरागे ॥

न लइ पथिक तरुण व(ओ<sup>१</sup>)सु रे . ।  
 एखने हमर गमन नहि दूरे . ॥ ध्रुवं . ॥  
 दिवस क × × (१ल्याण) अतिथि (१म)जे तोरा . ।  
 चिन्तहि धनिक स (१सं) भोयण(१ल) मोरा . ॥  
 भगव देखि [१३ख] अलङ्कार बुझावे . ।  
 कविशेषर जोतिक एहु गावे . ॥

मृताङ्गारः—भगवन् ! अस्मदावासोत्तरे सुरतप्रिया-  
 नाम मासोपवासिनीति तत्र गम्यतां :

(इत्यभिधाय सत्वरं निष्क्रान्तः ।)

विश्वनगरः—वत्स ! यद्येवं तत्समीहितमेव सम्पन्नं । तदेहि  
 तत्रैव गच्छाव ।

(इति परिक्रामतः )

स्नातकः (पुरोऽवलोक्य गन्धमाघ्राय च)—भअवं प्रेक्ष्य  
 एकङ्गिआमुत्थमेत्थिआसंयुत्तमहाहन्द कुट्टपरिम-  
 लुगारो अग्निमभवणादोणं सेवदि . ता एदं  
 ज्जेव सुरअप्पिआए वासभवनं तक्केमि :



विश्वनगरः—विदग्धैव किल मासोपवासिनी किम्बदन्ती

तदाग[१४क<sup>१</sup>]=छोपसर्पाव

(इत्येकान्ते स्थितौ ॥)

(ततः प्रविशति सुरतप्रिया)

॥ शाल(सार?)ङ्गीरागे ॥ पणितालताले ॥

अइलि हे (रे<sup>२</sup>) मम वासी •

परधना बन्धि खाथि निवासी ॥ ध्रुवं ॥

कुश कमण्डलु पूड़ा साँख ।

काकन बाह गरा रुदराख ।

चाँन्दन वेन्दा लाइ सुललाट ।

पथिक ठकथि वैसलि बाट ॥

आरव आहर धरम मोख ।

मुख समर्थ सवहि सोख ॥

सुनिज — सुरतप्रिया रीति ।

हसइ सिरि गणेशर मन्ति ।

१—एहि स्थलसँ नेपालक पुस्तकालयमे जे संस्कृत-धूर्तसमागम छैक  
तकर पृ० ६(क) आरम्भ छैक ।

२—ई अक्षर काटल छैक ।

धम्मो ण इष्ठा(१डो<sup>१</sup>) बहुदुखखचेष्ठो(१डो<sup>१</sup>)  
 मोक्षेण(१मोक्षोनं<sup>१</sup>) सोक्खं मम अत्थि संव्वं(१च्चं) ।  
 अत्थो समत्थो सयलं(१अलं) विधावं(१दुं)  
 अण[१४ख]ङ्गसव्वस्सकलाणिहाणं ॥

रनातकः—( उपसृत्य ) । अज्जे एसो भअवं विस्सणअरो  
 तुम्हाणं अदिधी(उ)अत्थिदो

सुरतप्रिया ( परिक्रम्यावलोक्य च )—कथं भअवन्ता उअस्स-  
 प्पामि (उपसृत्य) भअवं(नं<sup>३</sup>) पणमामि ।

विश्वनगरः (सप्रमोदं)—अभिलषितभाजनं भूयाः ।

सुरतप्रिया—भअवं तुम्हाणं प<sup>४</sup>साएण

विश्वनगरः—एवमचिरादस्तु

सुरतप्रिया—आणवेदु भअवं जं मए कादव्वं दाअव्वञ्च

विश्वनगरः—शुभे किमस्माकमदेयं भवत्या । सांप्रतं भिच्छे-  
 (लै<sup>१</sup>)व तावत्

१—ई पाठ संस्कृत धूर्तसमागमकेर थिक ।

२—एतए एकटा कोनो अक्षर जे पढ़ल नहि मेल, काटल छैक  
 प्रायः ओ “खो” छैक ।

३—ई अक्षर काटल छैक ।

४—‘प’ अक्षर काटि क ‘व’ चढ़ाओल छैक ।



सुरतप्रिया—भञ्जवं<sup>१</sup> कीदिसी भिक्षुका कीदिसीए बेलाए  
केत्तिआइं ते अणाजि ।

विश्वनगरः(सहर्ष)<sup>२</sup>—श्रूयतां<sup>३</sup>  
मांसं<sup>४</sup> माषं<sup>५</sup>[१५क]पटोलतक्रवटिकावास्तूकशाकं वटः  
सिञ्जीवन्यथ मुद्गमत्स्यविदलप्रायः(१) प्रकारोत्करः ।  
स्वादिष्टं च पयोधृतं दधि नवं रम्भाफलं शक्करा  
सन्निपादिति साध्यतां सुवदने भिक्षा मदीया द्रुतं ॥

बरालीरागे । एकतालीताले ।

भिखिआ मोरि करब रे ।  
सुवदनि भिखिआ मोरि करब रे आ ॥ ध्रुवं ॥  
मासु माछ बल बटिका सांजवि  
सद्य(?) सुनि साग परोले आ ।  
मुद्ग दितले परकार कर<sup>६</sup>व  
सवे सङ्गिनि कहज थोले आ ।

१—ई शब्द संस्कृते पोथीमे छैक ।

२—नीचाँमे शोधिकेँ 'मांसं' लिखल छैक ।

३—एहिठाम 'माषय' पाठ छलैक ।

४—एकटा 'र' लिखिकेँ काटल छैक ।

तहि दिन जनमाओल दधि •  
 सुनु सत्वर सोन्ध दूध बड़ घीवे ।  
 केरा सङ्गि रस वेद्य(?) युगुताओव  
 कविशे[१५क]पर जोतिक एहु<sup>१</sup> गावे ॥

सुरतप्रिया ॥ (विहस्य स्वगतं)—एसो महप्पा अप्पविसज्ज-  
 णजोग्गो ज्जेव देवस्स पसाएण सम्पण्णो ।  
 (प्रकाशं अञ्जलिं बध्वा)

एदं श(१स<sup>२</sup>)रीरं विरहेण जुत्तं ।  
 पाणा<sup>२</sup> तहा धम्मफलेकसारा ।  
 सव्वं तुहाअत्तमुदारकित्ति ।  
 का वाहिरे वत्थुणि अत्थि अत्था ॥

ताव अन्तरघरं पविसिअ वीसमीअदु भअवं ।  
 अहं उण भिक्खापआरं करोमि ।

स्नातकः (सोत्साहं<sup>३</sup>)—भअवं पेक्खेसि (संस्कृतमाश्रित्य)

- 
- १—‘हु’ पाँतीक उपर चढ़ाओल छैक । पाँतीमे ‘हि’ लिखल छैक ।  
 २—ई अक्षरसभ संस्कृत धूर्तसमागम मात्रमे छैक ।  
 ३—ई अक्षरसभ संस्कृत पोथीमे नहि छैक ।

पक्वाः कुन्तलराजयः कटकटाक्षामौ कपोलाबुभा-  
वेतस्याः स्तनमण्डलं निपतितं शुष्का नितम्बस्तटी ।  
दृक्पातस्मितभास्वि(षि?)तैः शिवशिव प्रस्तौति नेत्रोत्सवं  
ब्रूमः किं किं [१६क] करवाम वेति<sup>१</sup> किमियं दुष्टा जरत्तापसी ॥

॥ लरि(लि?)त रागे ॥ एकतालीताले ॥

चल चल चलम्भा विफ(१क)ल तजी  
सिद्धा<sup>२</sup>महु बोलसि मसवासि राजी ॥ध्रुवं॥  
गाल पचकि लवि गेलश्रोक आ ।  
तइअओ न छाड़सि अपनु कि मया . ॥  
भुषलि किञ्चिनि सन तोहर चान .  
कके विहुसि<sup>३</sup> हसि लेसि परान ॥  
पडअ पयोधर पाकल बार  
सिव-सिव कत करब अनविकार . ।  
कविशेषर जोतिक एहु गाव  
राए हरसिंह नए रस भाव ॥१२॥

१—ई छवओ अक्षर संस्कृत पोथीमे छैक ।

२—एहिठाम इकार छलैक जे कांटल छैक ।

३—प्रायः एकरा 'सी' बनाए शुद्ध कएल छैक ।



विश्वनगरः (स्नातकं प्रति) — किमसाधुजनोचितं प्रलपसि ।  
(सुरतप्रियां प्रति) शुभे गम्यतां प्राकशालां प्रति वय-

[१६ ख] मप्यागच्छन्त एवास्महे

सुरतप्रिया — जं भअवं आणवेदि<sup>१</sup>

(इति निष्क्रान्तौ<sup>२</sup>)

स्नातकः — भअवं जाव मिकखा सिज्झदि ताव (१ एत्थ)  
ज्जेव भअवं टिट्ठदु अहं उण अणङ्गसेणिआए  
पउत्ति जाणिअ लहुँ आगच्छामि

विश्वनगरः — वत्स सहैव गम्यतां<sup>३</sup>

(इत्युभौ परिक्रामतः)

स्नातकः — भअवं मूलणासअणाविदस्स गेहसणिणधाणे अणंग-  
सेणिआए भवणं पत्ति । मए सुदं ता तस्स  
ज्जेव अ(णु<sup>४</sup>)सारेण अणेसम्हि (अप्रतोव लोक्य . )

१ — एहिठाम 'खिड' लिखि कए काटल छैक ।

२ — संस्कृत पोथीमे 'निःक्रान्ता' पाठ छैक ।

३ — आदर्शमे सन्धि कएल छैक 'मि' ।

४ — ई अक्षरसभ संस्कृत पोथीमे छैक ।

भो भअवं पेक्ख<sup>१</sup> पेक्ख । एसा अणङ्गसेणा बार-  
विलासिणी विलोइ(अ<sup>२</sup>)दि

विश्वनगरः—तदागच्छाग्रतः एवैनामुसर्पाव

( इत्येकान्ते स्थतौ । )

( ततः प्रविशति अनङ्गसेना ॥ )

[१७क<sup>३</sup>] मालवरागे . ॥ एकतालीताले . ।)

कत न कलावति नारि रे आ . ।

अत सुविह नित रूप वटोरि रे आ . ॥ध्रुवं . ॥

सबे सरीर मोर रे आ . ।

तथिहि सहस मुखमण्डल मोरा रे आ . ॥

कनक बराधर बइसि रे आ .

कनकनण्डाइ उगल ससि जनि रे आ . ॥

अनङ्गसेना तसु देखि रे आ .

मुगुध भगव प(र१)लोक उपेखि रे या ॥

१—एहिठाम '२'मात्र लिखल छैक तेँ दोसर 'पेक्ख' जोबल अछि ।

२—संस्कृत-धूर्त्तसमागमक ई पाठ थिक । प्रायः 'इ'हुक स्थानमे 'क' मात्र पाठ छलैक ।

३—एहि पत्रमे तीनिए पाँती छैक ।

मोट

कविशेषर एहु भण रे या  
हरि पय भगत गणेशर जान रे आ ॥१३॥

[१७ख<sup>१</sup>] स्नातकः (सहसोपसृत्य)—भञ्जवं पेक्ख अणङ्गसेणाए  
लावणयलद्धिम

णीलाम्भोरुहपत्तकन्तणअणा सम्पूर्णचन्दाणणा  
उत्तुङ्गत्थणभारभङ्गरतणु वेइव्व मज्जेकिसा ।  
बाला मत्तगइन्दमन्दगमणा सुन्देरसोहामइ  
नूनं पञ्चसरस्स मोहनलदा सिङ्गारसञ्जीवनी ।

विश्वनगरः (स्वगतं . )—

यन्नेत्राञ्चलभङ्गिलङ्गिममयस्मेराननाम्भोरुहा  
यत्ने क्रीतविलासहासवसतिर्यत्कर्णरोमोद्गमा . ।  
यद्भावेङ्गि[१८क]तलङ्गतां तरलतामालोक्य गोपायति  
प्रायस्तत् कथयत्यनङ्गरचनामङ्गे कृशाङ्गी स्थितां ॥

(प्रकाशं)

वत्स सम्यगुपलक्षितं तथा हि ।



यत्तीर्थाम्बुमुखाम्बुजासवरसो नेत्रे नवेन्दीवरे  
दन्तश्रेणिनखास्ताक्षतचयो दूर्वा च रोमावली ।  
उत्तुङ्गं च कुचद्वयं फलयुगं पात्रं (१त्रांकु<sup>१</sup>)कराम्मोरुहं  
तन्मन्ये मदनार्चनार्हितमतिः साङ्गोपहारैरियं ॥

(अनङ्गसेनां लक्ष्मीकृत्य)

यत्पूर्वं रचितं तपः प्रतिदिनं या तीर्थयात्रा कृता  
यद्भूम्ना पुरुषोत्तमार्चनविधौ चेतः कृतार्थीकृतं ।  
य(१त<sup>२</sup>)स्यैतत्परमप्रमोदजनकं प्राप्तं फलं कर्मण-  
स्तत्किं शास्त्रकथारसेन किमहो स्वर्गेण मोक्षेण वा ॥

( इति कामावस्थां नाटयति ॥ )

॥ बरालीरागे ॥ एकताली ताले ॥

जत हरि भगति पुरुषे मन

... ..<sup>३</sup>

[१८ख] अरे हमरे तु भेला गो ॥ ध्रुवं ॥

कतहक मोखेँ परम सुख होइ ।

१—संस्कृत प्रतिमे ई छेक ।

२—संस्कृतपोथीक पाठ ई थिक ।

३—ई पाँती अस्या द छेक ।

कतह धेअँन परम पद देइ ॥

की फल जपतपवासहि मोराँ

जजो पाओव सनिधान तोहारा

मुगुध भगव परलोक उपेखी ।

करइ विनति पुनु नागरि देखी - ॥

कविशेषर जोतिक एहु गाव - ।

राय हरसिंह बूझए रस भाव ॥ १४ ॥

॥ नाटशगे ॥ यत्तिताले ॥

चल सरोजसुन्दरनयने - ।

मामनुकम्पय शशिवदने - ॥ ध्रुवं - ॥

राजमरालविदितगमने - ।

रतिपति सब हुतवह शमने - ।

विशलतिकामृदुभुजयुगले - ।

कामकलामथरसकुशले - ॥

कामनिधनकलशपयोधरे - ।

सञ्जतमुनिजनमनमनोहरे - ।

विश्वनगरामिहभजनमिते ।

कविशेषरजोतिक[१६क]भणिते ॥ १५ ॥

॥ कानलरागे ॥ प्रतितालताले ॥

( स्नातकनृत्य • ॥ )

हरि हरि हरि न सुधेअँन • ।  
 थापहि थीर भगव मेअँन • ॥ ध्रुवं • ।  
 हमरि दारा कतहु जानी • ।  
 तेजहि तासु अनुबन्धक हानी • ।  
 खन एक रतिरङ्गतरङ्गे • ।  
 छाड़ गोसाजी जुवतिसङ्गे • ।  
 कुलिश कठिन दण्डपहारे ।  
 भगवचरित योतिक भासा ।  
 सुनिजे मन्ति गणेश हासा ॥ १६ ॥

स्नातकः (सवैराग्यं) ॥ (आत्मगतं<sup>१</sup>)-एसो लम्पलो उन्दुरुविअरे  
 सप्पो विअ पइट्ठो । भोदु । जुत्तिपहाणेहिं बअणेहिं  
 णिवारइस्सं (प्रकाशं) भअवं तुमं उपेक्खिदसंसार-  
 सोक्खो मोक्षेक्कपरायणो कधं एआरिसे मअति-  
 एहासरिसे पलिअ अप्पाअणं वावादेसि । णिअ-  
 तीअदु इमादो दुट्ठगणिजापसङ्गमादो त्ति ॥



विश्वनगरः [१६ख] (साधकं)—रागे (१वत्स न) एवं परयसि

यावदृष्टिर्मृगाक्षीणां नो नरीनर्ति मङ्गुरा ।

तावज्ज्ञानवतां चित्ते विवेकः कुरुते पदं ॥

अनङ्गसेना (विहस्य)—भअवं धणाधीणो × (क्खु) अअं  
जणो त्रात्किं (१स्व अश्वणोताकिं) एत्थ अरणरु-  
दिअं कदुअ अप्पाणअं विलम्बेँसि

विश्वनगरः—प्रिये सन्यासिनामस्माकं कुतोऽर्थसम्पत्तिः ।  
तम्मच्छरीरेणैव यथासुखं विनियोगः क्रियतां ।

(सानुरागं)

बाले मृणालदलकोमलबाहुदण्डे

चण्डे प्रसन्नवदने मयि देहि दृष्टि ।

एष त्वदीयवदनांबुजकृष्टचेता

दीनो यतिः सपदि मञ्जति कामसिन्धौ ॥

(इति कामावस्थां नाटयति)

स्नातकः—भो भअवं तुमं उपेक्खिदसंसारसोक्खो (इत्यादि  
पठति)

अनङ्गसेना (संस्कृतमाश्रित्य पठति)—भगवन्नलमत्रात्यन्तानुब-  
न्धेन यतः

वागर्थं परिगृह्य मोक्षपदवीं ध्यायन्ति निर्म्मत्सराः  
बालप्रौ[२०क]दकुलीनवृद्धविषये सर्वत्र साधारणाः ।  
रागद्वेषममत्वकर्षितधियो वेश्याः सुरा भिक्षवो  
वस्तुं नन्वपि नित्यमित्यहह किं कामार्णवे मञ्जसि ॥

विश्वनगरः—प्रिये गृहाणास्मच्छरीरं

(इति तां अञ्चले धारयति)

स्नातकः (सहसोपसृत्य)—अरे णट्टपरलोआ दुट्टपरिवाअआ  
एसा अम्हपरिग्रहेण तुह पुओहु होदि

विश्वनगरः—धिङ्मुख एषास्मद्वधूस्त्वद्गुरुपत्नी मातृतुल्या  
च तत् किमेनामनुबधासि

स्नातकः(सक्रोधं)—अरे (रे<sup>१</sup>) लम्पला एवं भणन्तवस्स  
दण्डपहारेण पक्कमालुरफलं विश्र मुण्डं (दे<sup>१</sup>)  
थोत्थरं करइस्सं

(इत्यन्योन्यं कलहं कुरुतः)

अनङ्गसेना (स्वगतं)—कथं धुत्तहत्थपलिदम्हि । भोदु एवं  
 ताव (प्रकाशितं ।) (?प्रकाशं) भो महामाश्रधेया  
 तुमं एआरिसे महाविवादे असज्जाहमिस्सो  
 पमाणीकरीअदु

विश्वनगरः—प्रिये एवं भवतु

स्नातकः—पिए दहटङ्कआ मए दा[२०ख]दच्चा ता तं गेएहि-  
 अ मह मणोहरं संपादेहि ।

(इति ग्रन्थि दर्शयति)

विश्वनगरः—अलं दर्शनेनागच्छाव .

(इति निष्क्रान्ताः सर्वे)

प्रथमोऽङ्कः ॥



(ततः प्रविशति असज्जातिमिश्रो विदूषकश्च ॥)

शालङ्कीरागे ॥ यतिक त्रिताले ॥

आगम वेद किछु किछु जानिअ .

परक वित्त धन्धि घर आनिअ ॥

चलक कोटे ओ (?उ)तरासइ(?हु?ङ्ग)

धोती गरुअ उम्भोस देख(?।)वे ।

सबइ चाहि बड़ सोति बोलाइ .

अपइ(?अपजस) गह के मुह बावे ॥

असत बोलि उपसरपन

लाइअ परके पाणिअ गारी ।

हरि सिर गाहु विरुनि धन

आनिअ बयाल हकारिअ दारी ॥

भणे कविशेपर सुनहु रे .

लोक हे ओभा दरसन देवे ।

महोमन्ति जीवतु गणेशर(?गणेश रे)

तीस बीस भणे कवे ॥ १७ ॥

असज्जातिः (सप्रमोदं • ) ॥

त्रैलोक्ये भोजनं श्रेष्ठं ततोपि सुरतो[२१क]त्सवः ।  
भोजनं वास्तु वा नास्तु जीवनं न रतं विना ॥

वत्स बन्धुवञ्चक आगच्छ अधीश्व

विदूषकः—यं मिस्सो आणवेदि

असज्जातिः—

यद्वासावत्तूपानं यदलसनयनालोकनं केलिरङ्गे  
तस्मादप्यङ्गसङ्गः कुचकलससमुत्पीडने वाहुमङ्गिः ।  
एतत्संसारसारं कुरु निजहृदये निर्विकल्पैककल्पं  
किन्ते कार्यं विवादकथितमतिश्रुतग्रन्थकन्थाभरेण ॥

विदूषकः—भो मिस्स पराङ्गणासंभोगादो पि परमन्दिरे सन्धि  
कल्पिअ जं अतथो हरीअदि तं ज्जेव तिहुअणसारं  
पेक्ख

किं वाणिज्जेण कज्जं निअधनविलअं तं कखु काऊण दुक्खं  
किम्वा कज्जं किसीए पसुवसुणिअमाआस णिकज्जिदोए ।  
किम्विज्जाए फलं वा मरणसमसमुप्पणं चिन्ताउलाए  
एक्कं तेलीअसारं परधनहरणं जूअकीलासुहअ ॥

ता एत्थ धुत्तउरणअरेप्राजादि[२१ख]सो तुमं गुरु  
तादिसो अहं सिस्सो संबुत्तो .

(गोपयन्मनांश्च १३६ ॥ ७६ ॥ तत्तुहो)

असज्जातिः (सवैराग्यं) । अहो नगरेस्मिन्निरुपधिजीवनतया-  
स्मद्विधश्रोत्रियाणां स्थितिः यतः दिनाष्टतयादारभ्य  
न कश्चिन्न्यायवादी न कपटश्राद्धप्रतिलम्भी न  
गणिकाजनालापः

(नेपथ्ये)

भो-भो विज्ञायतां असज्जातिमिश्रस्य न्यायकरणार्थं  
वादिनौ द्वारि वर्त्तन्ते

(१३७ ॥ ७७ ॥ तत्तुहो ॥ ७७ ॥ तत्तुहो)

असज्जातिः (विश्वनगरस्नातकौ निरीक्ष्य स्वगतं) कथं अनर्थान्तरं  
आपतितं (प्रकाशं) भगवन्नागन्तुका वयं तत्रात्र  
मिक्षावसरः

विदूषकः—भो मिस्स एदे ज्जेव वादिणो एदाणं विवादं  
विचारेदु मिस्सो

असज्जातिः (सहर्षं सगर्वञ्च) —आसनमुपनीयतां भगवते



[२२क] स्नातकाय च ।

(विदूषकः तथा कृत्वा सर्वानुपवेशयति । )

असज्जातिः—कोथी कः प्रत्यर्थी च

स्नातकः—भासाए अहं अत्थी . गीअलकरणे पथ्यर्थी<sup>१</sup> भअवं

असज्जातिः—न्यायवादिनः प्रथमतो निकरः पश्चाद्भाषोत्तरे  
तत्क्रियतां भाषोत्तरे

विश्वनगरः—अयमस्मत्सन्यासदण्डो निकरः

स्नातकः—एदं मे इन्द्रासणकोलिअं गीअरकरणे पविणीअदु

असज्जातिः (सगौरवं गृहीत्वा सप्रमोदं गन्धमाघ्राय च)—किञ्चि-  
द्विनियुज्यते

निद्राकरं दोषविनाशहेतु

क्षुधाकरं बुद्धिविकाशकश्च ।

इन्द्रासनं कामकलानुकूलं

लब्धं मया दैववशादिदानीं ॥ [२२ख]

१—इ शब्द संस्कृतपोथीमे नहि छैक ।

विश्वनागरः—

स्वाधीनयौवना सुभ्रूः

सा मान्या सर्वकामिना ।

अस्माभिरियमाक्रान्ता

मदीया तेन वल्लभा ॥

असज्जातिः (भाषां भूमौ लिखित्वा स्नातकं प्रति) स्नातक

त्वमुत्तरं कुरु ।

स्नातकः—

एसा पुव्वं मए दिट्ठा दाउण दशटङ्कया

आणीदा अ मदिं दाइ मदीया येन वल्लहा ॥

(असज्जातिः उत्तरमभिलिखति)

विदु • भो मिस्स पेक्ख पेक्ख अणङ्गसेणाए लावणलच्छि

मअलल्लणविम्बफुरन्तमुहो

णअणुप्पलचञ्चलकेलिणिही

थणभारणआ अइमज्झकिसा ।

पठमोदिअचन्दकलासरिआ

असज्जातिः (अनङ्गसेनामालोक्य)—अहो • निम्मीयावैदग्धी

विधातुः तथा हि [२३क]

नीलोलसल्ललितखञ्जनमञ्जुनेत्रा

सम्पूर्णशारदकलानिधिकान्तवक्त्रा ।

बाला जगत्रितयमोहनदिव्यमूर्ति-

र्मन्ये विभाति जगति स्मरवीरकीर्तिः ॥

भो वादिनावेषा विवादाध्यासिता अनङ्गसेना जय-  
पराजयं यावन्मध्यस्थस्थाने स्थाप्यताम् । एवंविध-  
माध्यस्थे त्रयमेव नृपतिव्यवस्थापिता मध्यस्थाः ।

(अनङ्गसेनामानीय स्वसन्निधावुपवेश्य तदीयकरैः)

हृदयं(?) निधाय सप्रमोदं)

विकचकमलकोषश्रीरियं काम्यकान्ति-

हिमकरकरजाताच्चन्द्रकान्ताद्धि शीतः ।

मृगमदधनसारामोदसौरभ्यभंव्यो

हरति मदनतापं कोमलः पाणिरस्याः ॥

(क्षणं विचार्य पुनरुच्चैर्विहस्य)

भो वादिनावेतद्राज्यक्षेत्रे धूर्तयोरिव युवयोर्विवादः

तथा हि

नैषा त्वदीया भवतोपि नय  
मत्सं[२३ख]निधिष्ठा सुभगा मदीयं ॥  
स्वप्नेपि पूर्व मयि ज्ञातकेलि-  
स्ततोपि हेतोः खलु वल्लभा मे ॥

देशापरागे ॥ एकतालीताले ॥

तोहरि ओ नहि के सनातक भगव  
तोहरि नहि नारी ।  
हमरिए हमरा लग अछ वैसलि  
परतप हलिअ विचारी ॥ ध्रुवं ॥  
परुकाँ सपने हमे अवलोकलि  
हमरि तेहि के न जाने ॥  
हारल भगव सनातके दुहु जने  
तन्हि असजातिक थाने ॥  
कविशेषर जोतिक एहु गावे  
राए<sup>१</sup> हरसिंह बुझ भावे ॥१८॥

विदूषकः ( अनङ्गसेनामालोक्य जनान्तिकं ) । एसो भिस्सो बुद्धो

---

१—एहिठाम एकटा विचित्र एहन चिन्ह छैक बकर अर्थ नहि लागल ।



भञ्जवं णिद्वणो सणादगे मिच्छारअणो ता एदाणं  
समागमं परिहरिअ । अम्हसमागमेण तुम्ह योव्वणं  
सफलं भोदु

( इत्यात्मा [२४क]नं दर्शयति )

अनङ्गसेना (सस्मितं)—कथं धुत्तसङ्गतए फलहलणं सम्बुत्तं  
विश्वनगरः (सवैराग्यं ) ॥

॥ कोलावरागे . ॥ परिम च(?)ताले . ॥

अरे रे सनातक तोरिहि कुमान्ति . ।  
अनङ्गसेना हरि लेल असजाति ॥ध्रुवं॥  
कतए विचार कराओल आनि . ।  
जन्हिक चरित सुन मूलनाशक जानि ।  
हेरित हि हरि धन लए गेल चोर . ।  
हाथक रतन हरायल मोर . ।  
कके होएबह हरि अनुरागे . ।  
जोंकक आग गोतल न लागे . ।

( कविशेषर जोतिक एहु गाव । )

राय हरसिंह बूझए रस भाव ॥१६॥

विश्वनगरः---वत्स दुराचार न हि जलौकसामङ्गे जलौका  
लगति । मूलनासकस्यायम्बिचारः तदेहि सुरतप्रिया-  
स्थानं गच्छाव

( इति निष्कान्तौ द्वाविति ॥ )

॥ प्रविश्य [२४ख] पटीक्षेपेण मूलनाशकः ॥

॥ धनछीरागे ॥ एकतालीवाले ॥

हमे मूलनासक नाउ

हमे खलनाशक न ×

× × हमर × × × × ×

जीव एति दिवस परमाउ ॥ ध्रुवं • ॥

बहुल मानुस मोख लाउ

जर जाउ(१आयु) भेल

कतोक थकरब साख ।

× × × × निकान्दलि

आजे मुइल मोर मतार ॥

खउर वार सब हमोहि हकारण

आनल उन रे आउ ।

केतु म्वाड (१चाण्ड).....

जन्म नछतक जाए ।

मोरि न कसो हनि काँत चोट रे ।

काति खण्डाक धारे

मोरि थक तीवर वसिए गेल

खर मोर मोख दुषाव ।

कटइते जोएल निरस जोअहि (जोअहि)

आचलि दिठ एह विवाद

कविशेषर जोतिक एहु गाव ए

राए हरसिंह बुझ भाव ए ॥२०॥ [२५क]

( ॥ इति परिक्रम्य ॥ सुहूर्त चोदय प्रकाशः )

अले ले अणङ्गसेणिए जाणिदे तुम्ह चलिदं जं वालं

वालं कअमअणमन्दिर (कखोल) बेअण पत्थन्ते

बहुवालं हगे तए (प?) आसिदे ता शंपद पयच्छ ॥

अणधा लाअदोहाई दोइस्सं

अनङ्गसेना—मूलनासअ संपदं ज्जेव असज्जातिमिस्सादो

अप्पाणो दाइस्सं ॥

विदूषकः ॥ को एसो

असज्जातिः—आः किं एष भगवद्गोचरः । पश्य

छिन्नौष्ठनासो गलगण्डमग्नौ

वामाक्षिकाणो गलितैकहस्तः ।

शिलीपदव्यापृतदक्षिणाङ्घ्रिः

स मूलनाशः किल नापितोऽसौ ॥

( मूलनाशकश्च सहसोपसृत्य सर्वेषां सप्रमाणमादर्शं दर्शयति ॥ )

[२५ख] असञ्जातिः—मूलनाशकं क्रियतामस्माकं नखलोम्नां  
परिष्कारः ।

मूलनाशकः—भो मिस्स पठमं पत्रच्छ ।

असञ्जातिः—मूलनाशकं किमर्थं

मूलनाशकः—भो यदि तुमं पलिकखलन्ते । पठमं ज्जेव  
मल्लिशशि ता वेअणं केण प्रतिपिट्ठं

असञ्जातिः—अलं परिहासेन गृह्यतामिदं

( सगौरवं गृहीत्वा सप्रमोदं आघ्राय किञ्चित्  
विनियुज्य मिश्रस्य चरणयोर्बन्धनं कृत्वा व्यापारं  
नाटयति )



असज्जातिः (सवेदनं) —

दलति हृदयमेतत् मोहमम्येति चेतः  
स्फुटति सकलदेहे कीकसग्रन्थिसन्धिः ।  
विरम विरम शिल्पान्मूलनाश त्वमस्मात्  
शिव शिव शिव सद्यो जीवितं त्रुट्यतीव ॥

(इति मोहमुपगतः)

परिशिष्ट  
धूर्तसमागम-प्रहसनम्  
ज्योतिरीश्वर

## ॥ अथ धूर्तसमागमः ॥

॥ प्रस्तावना ॥

हर्षादिभोजजन्मप्रभृतिदिविषदां संसदि प्रीतिमत्या  
श्वश्वान्मौलौ पुरारेदुहितपरिणये साक्षतं चुम्ब्यमाने ।  
तद्वक्त्रं मौलिवक्त्रे मिलितमिति भृशं वीक्ष्य चन्द्रः सहासः  
दृष्ट्वा तद्वक्त्रमाशु स्मितसुभगमुखः पातु वः पंचवक्त्रः ॥

अपि च ॥

वक्त्रांमौरुहि विस्मिताः सखकिता वलोरुहि स्फारिताः  
श्रीणीसीमनि गुम्फिताश्चरणयोरक्षणेः पुनर्विस्तृताः ।  
पार्वत्याः प्रतिगात्रचित्रगतयस्तन्वन्तु भद्राणि वो  
विद्धस्यान्तिकपुष्पसायकशरैरीशस्य दृग्भक्तयः ॥

नान्द्यन्ते सूत्रधारः ॥

यदद्य

नानायोधनिरुद्धनिर्जितसुरत्राणत्रसद्वाहिनी-  
नृत्यद्गीमकवन्धमेलकदलद्गुमिश्रमद्गुधरः ॥

अस्ति श्रीनरसिंहदेवनृपतिः कर्णाटचूडामणिर-  
दृष्यत्पार्थिवसार्थमौलिमुकुटन्यस्ताडि घृपङ्केरुहः ॥

तस्योद्युक्तभुजप्रतापदहनज्वालानिरस्तापदो

राजः सर्वगुणानुवादपदवीविद्योतनाचार्यकः ।

यो धीरेश्वरवंशमौलिमुकुटो दातावदाताशयस्-

तस्य श्रीकविशेखरस्य कविता मच्चित्तमालम्बते ॥

तदनेन सकलसंगीतविशेषविद्योतनाभिनवभरतेन पुरमथन-  
पदारविन्दद्वन्द्ववन्दारुकरपल्लवेन निखिलभाषोपभाषाशुभभावुक-  
सरस्वतीकण्ठाभरणेन अनवरतसोमरसास्वादकषायकण्ठकन्दली-  
नरीनृत्यमानमीमांसामहोत्सवेन रामेश्वरस्य पौत्रेण तत्रभवतः  
पवित्रकीर्तध्रीरेश्वरस्यात्मजेन महाशासनश्रेणिशिखरभ्रामत्पल्ली-  
जन्मभूमिना कविशेखराचार्यज्योतिरीश्वरेण निजकुतूहलविरचितं  
धूर्तसमागमनाम प्रहसनमभिनेतुमादिष्टोऽस्मि । तस्य चादिष्टमवश्य-  
मिष्टं मालतीमालेव मया शिरोधरणीयं ॥ तथा हि—

कर्पूरन्ति सुधाद्रवन्ति कमलाहासन्ति हंसन्ति च  
प्रालेयन्ति हिमालयन्ति करकासारन्ति हारन्ति च ।



त्रैलोक्यांगणरंगलङ्गिमगतिप्रागल्भ्यसंभाविताः

शीतांशोः किरणच्छटा इव जयन्त्येतर्हि तत्कीर्तयः ॥

अपि च—

के नार्चिता दिविषदः कति न द्विजेशाः

संतर्पिता न कवयः कति पूजिता वा ।

के चार्थिनः प्रतिदिनं न कृताः कृतार्थासि

त्यागप्रसादपटुना कविशेखरेण ॥

तत् प्रेयसीमाहूय संगीतकमवतरामि ।

नेपथ्याभिमुखमवलोक्य

आर्ये इतस्तावत् ।

॥ प्रविश्य नटी ॥

अज्ज एसम्हि । आणवेदु अज्जो । को णिओओ पसाई-  
करीअदुत्ति ॥<sup>१</sup>

॥ सूत्रधारः ॥

आर्ये अपि न जानासि ?

यश्चत्वारि शतानि बन्धघटनालङ्कारभाञ्जि द्रुतं

श्लोकानां विदधाति कौतुकवशादेकाहमात्रे कविः ।

<sup>१</sup>आर्य एवास्मि । आशापयत्वार्यः । को नियोगः प्रसादीक्रियतां इति ।

ख्यातः क्षमातलमण्डलोष्वपि चतुःपष्टेः कलाया निधिः  
संगीतागससागरो विजयते श्रीज्योतिरीशः कृती ॥

तद्विरचितं धूर्तसमागमनाम प्रहसनमभिनेतुमारब्धमिति गीयतां  
नाट्योचितं किञ्चित् ॥

॥ नटी ॥ सविनयं

आणवेदु अज्जो को एत्थ पबन्धे पहाणो रसो जं  
उद्दिसिअ गाइस्सं ।<sup>१</sup>

॥ सूत्रधारः ॥

ननु प्रोत्फुल्लमालतीमकरन्दसान्द्रासोदमत्तमधुकरभङ्गारमु-  
खरो वसन्तः संततो ज्जृम्भितानङ्गशृंगार एव । तथा हि

विकसितनवमल्लीकुञ्जगुञ्जद्विरेफः

कुसुमितप्रहकारश्रेणिनिर्यत्परागः ।

प्रमुदितपिककण्ठप्रोच्छलन्मङ्गलश्रीर्-

अपहरति मुनेरप्येष चेतो वसन्तः ॥

॥ नटी ॥

मलआणिल चालिअचूअवणो

कलकण्ठसराहिदकामिअणो ।

<sup>१</sup>आज्ञापयत्वार्यः कोऽसि न प्रबन्धे प्रधानरसो यमुद्दिश्य गास्यामि ।

मअरन्दविमत्तशिलीमुहओ  
सुरहीकिदसच्चदिसामुहओ ॥

एसो वसन्तमासो मुणिअणसत्थस्स राअरहिदस्स ।  
उम्मूलिअ गरुधीरं करेइ वम्महवसं हिअअं ॥<sup>१</sup>

इति । गीयते नेपथ्ये

दण्डकमण्डलुमण्डितहस्तः  
सुललिततिलकविभूषितमस्तः ।  
अयमुपसर्पति जंगमलोभश-  
चलकाषायपटार्पितशोभः ॥

अज्ज को एसो परिक्खलन्तणिद्धोअकसाअवसणो दण्ड-  
कुण्डिआहत्यो धुत्तो विअ इदो तदो विलोएन्तो दीसदि ॥<sup>२</sup>

<sup>१</sup>मलयानिलचालितचूतवनः । कलकण्ठस्वराहृतकामिजनः ।

मकरन्दविमत्तशिलीमुखकः । सुरभीकृतसर्वदिशामुखकः ।

एष वसन्तमासो मुनिजनसार्थस्य रागरहितस्य ।

उन्मूल्य गुरु धैर्यं करोति मन्मथवशं हृदयं ॥

<sup>२</sup>आर्य क एष परिक्खलन्निर्घातकषायवसनो दण्डकुण्डिकाहस्तो धूर्त इव  
इतस्ततो विलोकयन् दृश्यते ॥

॥ सूत्रधारः ॥

आर्ये ।

यः श्रूयते जनमुखात् तुरगक्रियावान्  
 आचारधर्मरहितो गणिकाविलासी ।  
 दीर्घोर्ध्वपुण्ड्रककमण्डलुदण्डलक्ष्यः  
 पुष्पाति विश्वनगरः किल दम्भमुग्रं ॥

तदेतस्य दर्शनं दूरत एवाहरणीयं ॥

इति निष्क्रान्तौ ॥

॥ इति प्रस्तावना ॥





॥ प्रथमोऽङ्कः ॥

ततः प्रविशति यथानिर्दिष्टः स्नातकेनानुगम्यमानो विश्वतगरः ॥

॥ विश्वनगरः ॥ ॥ सनिर्वेदः ।

हृदयकमलमध्ये निर्गुणो निष्प्रपञ्चस्

त्रिभुवनपतिरेको ध्यायते योगिभिर्यः ।

तमेहमजरमाद्ये      ज्ञानमात्रैकवेद्यः

मधुमथनमुदारं संततं चिन्तयामि ॥

॥ स्नातकः ॥ समन्तादवलोक्य स्वगतं

<sup>१</sup>अहो रमणीअदा वसन्तस्स । जदो

उम्मीलन्तं पल्लवं रश्मिकुसला छप्पदा वम्महन्धा

कन्तारङ्गाणुरत्ता महुरसमविश्रं साणुराश्रं पिवन्ति ।

<sup>१</sup> अहो रमणीयता वसन्तस्य यतः—

उन्मीलत् प्रसूनं रतिरसकुशला षट्पदा मन्मथान्धाः

कान्तारङ्गानुरक्ता । मधुरसम्भितं ॥ सानुरागं पिबन्ति ।

उद्गायेन्ति । स्फुरन्तस्त्रिभुवनजयिनः । कामरागस्य कीर्तिः ।

संवित्ति हारयन्तः प्रियजनविरहे कोकिलाः कामिनीनां ॥

सावित्रि हरयन्तः प्रियोजनापरहः काकिलाः कामिनानां ॥

उग्गाश्रन्ति पुरन्ता तिहुश्रगजङ्गो कामरात्रस्सकिर्ति  
संविर्ति हारश्रन्ता पिश्रश्रगविरहे कोदलाकामिणीर्ग ॥

अपि च ।<sup>१</sup>

जे कप्पूरं हरन्ता कमलवणसिर्णि लोलश्रन्ता सहाव ।  
साहाश्रो कम्पश्रन्ता निहुश्रगसुहृथा चन्दगार्ग वगार्ग ।  
ते कन्दप्पस्स मिच्छा रइतणुरमणी केलिदप्पं कुरन्ता ।  
तेल्लोश्रं मोहन्ता मलश्रसिहरिणो सीश्रला वान्ति वाय्या ।  
त कथं एसो अइदूसहो वसन्तसमश्रो मए एकसरीरेण  
सहिदव्वो ॥

इति वैमनस्यं नाटयति ।

॥ विश्वनगरः ॥ स्नातकं निर्वर्त्य

अथे दुराचार कथमद्य चिन्ताभारनतकन्धरोऽन्यादृश इव  
दृश्यसे । तथा हि

<sup>१</sup>अपि च । ये कप्पूरं हरन्तः कमलवनश्रियं लोडयन्तः सभावं । शालाः  
कम्पयन्तो निधुवनमुखदाश्चन्दनानां वनानां । ते कन्दर्पस्य मित्राणि रतितनु-  
रमणीकेलिदर्पं कुरन्तस् । तैलोक्यं मोहयन्तो मलयशिखरिणः शीतला वान्ति  
वाताः ॥ तत् कथं एष अतिदुःसहो वसन्तसमयो मया एकशरीरेण सोढव्यः ॥

निःश्वासे पीवरत्नं वपुषि सुतनुता शून्यता दृष्टपाते ।  
 वक्त्रेन्दौ धूपरत्नं गतिषु विधुरता चेतसि स्नानता च ।  
 चेष्टा नैवेद्यते ते यदधिकविकलं रूपमासादितस्त्वं ।  
 तन्मन्ये पञ्चबाणस्तिरयति भवतो धीरतां पूर्वरूपां ॥

॥ स्नातकः ॥ सलज्जमधोमुखः स्थित्वा

‘भयानं अदिलज्जाकरं कथु एदं । ता ण जुत्तं तुम्ह पुरदो  
 पयासिदं’

॥ विश्वनगरः ॥

न दोषः स्वरूपाख्याने । तत् कथ्यतां ॥

॥ स्नातकः ॥ सप्रणयं

‘भयानं अज्ज मए महापहादे णअरपोक्खरिणीपरिसरे

‘भगवन्नतिलज्जाकरं खलु एतत् । तन्न युक्तं युष्माकं पुरतः प्रकाश-  
 यितुं ।

‘भगवन्नद्य मया महाप्रभाते नगरपुष्करिणीपरिसरे उपहसितसुरनागरी-  
 रूपसम्पत्तिरनङ्गसेना नाम वारविलासिनी विलोकिता । ततः प्रभृति सर्वगतां  
 तामेव प्रेक्षे ।

उबहसिदसुरणाश्ररीरुवसंपत्ती अणङ्गसेणा गाम वारविलासिणी  
विलोडदा ॥ तदो पहुदि सव्वगदं तं ज्जेव पेक्खामि ॥

॥ विश्वनगरः ॥ सहस्ततालमुच्चैर्विहस्यं

वत्स अद्य मयापि तत्रैव सुरतप्रिया नाम मासोपवासिनी  
दृष्टा । तामनुसंदधानोऽहमपि मर्मभेदिना कामवाणेन संदलित  
एव । तथा हि

आकाशे लिखितेव दिक्षु खचितेवाकीर्णरूपेव च

दृक्पद्मप्रतिबिम्बितेव मनसि श्लिष्टेव बद्धेव च ।

सा मच्चित्तपरोरुहे मधुकरीवात्यन्तभावोत्तरा

कान्ता कान्तावलासवासवसतिः क्वास्तीति न ज्ञायते ॥

उद्ध्वमवलोक्य

वत्स मध्याह्नमारूढो भगवान् सहस्रांशुः । तथा हि

दिक्चक्रं मृगतृणया कवलितं व्योमापि भात्वत्कर-

द्धायाभिश्रुतं तुषानलकणप्रायाश्च भूरेणवः ।

पान्थाः पल्लवसंकुलद्रुमलताकुञ्जोदरे शेरते

मज्जत्कुञ्जरपानलोहितजलाः क्षुभ्यति तोयाशयाः ॥

तद्विद्याकरणार्थमत्रैव कमपि गृहमेधिनमनुसराव ॥

॥ इति पराक्रमतः

॥ स्नातकः ॥ अग्रतोवलोक्य

१ भो भअवं पेक्ख पेक्ख विहिदभअवन्तजणमुण्डसरिच्छ-  
बहुअरमहिसीखम्भसोहन्तचउस्सालं इदोतदोसंचरन्तवालगोच्छ-  
सोहिदं पीणुत्तुङ्गत्थणालसपरिक्खलन्तमन्दसंचाररमणिज्जा-  
वासपरिसरसांचरन्तचेलिआसमूहं कस्स वि महाधणस्स वासभअणं  
विलोईअदि ।

२ भो भो णाअरा कस्स इदं वासभअणं ॥

इति पठति । नेपथ्ये

लक्ष्मीविवर्तरसविघ्नतसर्वभोगः ।

शश्वत्प्रकीर्णधनचिन्तितवीतनिद्रः ।

१ भो भगवन् प्रेक्षस्व प्रेक्षस्व विहितभगवज्जनमुण्डसदृशबहुतरमहिषीस्तम्भ-  
शोभमानचतुःशालं इतस्ततः संचरद्वालगोवत्सशोभितं पीनोत्तुङ्गस्तनालसपरिस्त्र-  
लन्मन्दसञ्चाररमणीयावासपरिसरसञ्चरच्चेटिकासमूहं कस्याणि महाधनस्य वास-  
भवनं विलोक्यते ॥

२ भो भो नागराः कस्यैदं वासभवनं ।



॥ ॥ अग्राह्यनामकतया भुवि यः प्रसिद्धः  
तस्यैतदाश्रमपदं पुरतो विभाति ॥

॥ स्नातकः ॥ अग्रतो गत्वा पुनः

॥ भो भो णाश्रमा कस्स इदं वासभश्रणां

इति पठति । पुनर्नेपथ्ये लक्ष्मीत्यादि

॥ विश्वनगरः ॥

आः क एष नामग्रहणे भवतो निर्वन्धः । अथवा  
यद्वा तद्वास्तु श्रूयतां । मृताङ्गारठक्कुरस्याश्रमोयं ।  
वत्स अलं विलम्बेन । वासाभ्यन्तरं प्रविशाव ॥

इत्यावासप्रवेशं नाटयित्वा एकान्ते स्थितौ । ततः प्रविशति कश्मलवेशौ ।  
मृताङ्गारः

॥ मृताङ्गारः ॥

व्ययशीलः कुवेरोपि कामं याति दरिद्रतां ।  
अपि प्राणाः प्रदातव्या नार्थिभ्यो धनिकैर्धनं ॥

॥ स्नातकः ॥ उपसृत्य

१भो महाबल्लण भगवन्तो विस्सणअरचरणा तुम्हाणं गेहे  
भिक्षुं भुञ्जिदुं इच्छन्ति ॥

। मृताङ्गारः ॥ स्वगतं

अहो दुर्दैवमस्माकं यदेतान् सकलनगरीयाद्यलोकान् विहा-  
मय्येव पतितो धूमकेतुः तत् कः प्रतीकारोद्य भविष्यति ॥

इति विचिन्त्य तावत् प्रकाशं सविनयं

स्थाने यस्य चरन्ति भैक्ष्यमनघाः स्नेहेन युष्मादृशः

स स्यादच्युतमूर्तिसेवनवशाद्धन्यः पवित्रालयः ।

किंत्वस्मत्प्रतिवेशिविप्रवनिता आतृप्रसक्ताङ्गना

दूती प्रसवेति सूतकमतः स्थानान्तरं गम्यतां ॥

॥ विश्वनगरः ॥ स्वगतं

अहो दुरात्मनोस्य व्याजव्यवहारः । भवतु वा । तत्  
प्रबोधयामि ।

१भो महान्नाल्लण भगवन्तो विश्वनगरचरणा युष्माकं गेहे भिक्षां भोक्तुं  
मिच्छन्ति ॥



धूर्तसमागमः

प्रकाशः

आयुष्मन् यतीतामस्माकं कुतः सूतकदोषः । तथा च स्मृतिः  
न वायुः स्पर्शदोषेण नाग्निर्दहनकर्मणा ।  
नापो मूत्रपुरीषाभ्यां नान्नदोषेण मस्करी ॥

॥ मृताङ्गारः ॥ सविनयं

भगवन् यद्यप्येवं तथापि न संमतिः । पश्य  
अनावृष्ट्या कृषिर्निष्ठा राष्ट्रभङ्गादृणादिकं ।  
वाणिज्यमल्पलाभेन प्रातराशस्य का कथा ॥

॥ स्नातकः ॥ सक्रोधं संस्कृतमाश्रित्य

धिङ् मौख्यं जलधिसुतायाः श्रियः  
नो जानाति कुलीनमुत्तमगुणं सत्वान्वितं धार्मिकं  
नाचारप्रवणं न कार्यकुशलं न प्रज्ञयालंकृतं ।  
नीचं क्रूरमपेतसत्त्वहृदयं यस्मादियं सेवते  
तत् त्वं सानुगुणः पयोधिसुतया लक्ष्म्या प्रमाणीकृतः ॥

अरे णष्ठपरलोत्रा दुष्टब्रह्मणा ईदिसे दूसह मज्झण्हे पठमं

अरे नष्टपरलोक दुष्टब्रह्मण ईदृशे दुःसहमध्यान्हे प्रथमं त्वां महाघनं  
भिक्षित्वा कुतोऽन्यतो गत्वा अस्मामिभिक्षा ।

॥ १५० ॥

तुमं महाधरणं भेक्खिअ कुदो अणदो गदुअ अम्हेहि भिक्खा  
पत्थिदन्वा ।

॥ मृताङ्गारः ॥

भगवन्नस्मदावासोत्तरं सुरताप्रियां नाम मासोपवासिनी  
प्रतिवसति । तत्र गम्यतां ॥

इत्यभिधाय सत्वरं परिक्रान्तः

॥ विश्वनगरः ॥

यद्येवं ततः समीहितमेव नः संपन्नं । तदेहि तत्रैव गच्छाव ॥

इति परिक्रामतः ॥ स्नातकः ॥ पुरोवलोक्य गन्धमाघ्राय

१ भअवं पेक्ख पेक्ख एकाङ्गिआमुत्थमेत्थिआसंजुत्तमहा-  
हन्दकुट्ठपरिमलुगारो अग्गिमभवणादोणं सेवदि । ता एदं ज्जेव  
सुरतप्पिआए वासभवणं ॥

१ भगवन् प्रेक्षस्व प्रेक्षस्व एकाङ्गिकामुस्तमात्रिकासंयुक्तमहाकन्दकुष्ठ-  
परिमलोद्गारोऽग्निमभवनादेनां सेवते । तदेतदेव सुरतप्रियाया वासभवनं ॥

विश्वनगरः ॥

विदग्धैव किल मासोपवासिनीति किंवदन्ती । तदागच्छो-  
पसर्पति ॥

इत्येकान्ते स्थितौ । ततः प्रावृशति सुरतप्रिया ॥

॥ सुरतप्रिया ॥

धर्मो न इष्टो बहुदुःखचेष्टो

मोक्षेण सौख्यं मम अस्ति सत्त्वं ।

अथो समर्थो सञ्जलं विधातुं

अनङ्गसर्वस्वकलानिहाण ॥

॥ स्नातिकः ॥ उपसृत्य

अज्जे विस्सण्णरो तुम्हाणं अदिधी उअत्थिदो ॥

धर्मो न इष्टो बहुदुःखचेष्टो मोक्षेण सौख्यं ममास्ति सत्त्वं । अर्थः  
समर्थः सकलं विधातुं अनङ्गसर्वस्वकलानिधानं ॥

अर्थे विश्वनगरो युष्माकमतिथिरुपस्थितः ॥

॥ विश्वनगरं युष्माकमतिथिरुपस्थितः ॥



॥ सुरतप्रिया ॥ परिक्रम्यावलोक्य च

१ ता उग्रसर्पामि । उपसृत्य । भञ्जं प्रणमामि ॥

॥ विश्वनगरः ॥ सप्रमोदं

मदभिलसितमाजिनं भूयाः ॥

सुरतप्रिया

२ भञ्जं तुम्हाणं प्रसादेण

३ विश्वनगरः

एवमचिरादस्तु ॥

सुरतप्रिया

३ अःशवेदु भञ्जं जं मए कादव्वं दाअव्वं च ॥

विश्वनगरः

शुभे किमदेयमस्माकं भवत्या । सांप्रतं भिक्षौव तावत् ॥

१ तदुपसर्पामि । भगवन् प्रणमामि ।

२ भगवन् शुभमाकं प्रसादेन ।

३ आशापयतु भगवान् यद् मया कर्तव्यं दातव्यं च ।

सुरतप्रिया

१ भगवन् कीदृशी भिक्षा कीदृशीए बेलाए केत्तिआइ  
ते अणाइ ॥

॥ विश्वनगरः ॥ सहर्षः

श्रूयतां ।

मांसं माषपटोलतक्रवडिकावास्तूकशाकं वटः ।  
संजीवन्यथ मत्स्यमुद्गविदलप्रायः प्रकारोत्करः • ।  
स्वाद्विष्टं च पयो घृतं दधि नवं रम्भाफलं शर्करा ।  
संक्षेपादिति साध्यतां सुवदने भिक्षा मदीया द्रुतं ॥

॥ सुरतप्रिया ॥ विहस्य स्वगतं

२ हं एसो महप्पा अप्पविसज्जणजोग्गो ज्जेव देववरस्स  
पसाएणो संपणो ।

१ भगवन् कीदृशी भिक्षा कीदृश्यां बेलायां कियन्ति ते अन्नानि ।

२ हूं एष महात्मा आत्मविसर्जनयोग्य एव देववरस्य प्रसादेन सम्पन्नः ।

ज्योतिरीश्वर

प्रकाशमञ्जलिं बद्ध्वा

१. इदं शरीरं विरहेण युक्तं ।

प्राणा तथा धर्मफलैकसारा ।

सर्वं तुहाश्रितं उदारकिति ।

का बाहिरे वस्तुणि अस्ति अस्था ।

२. ता अन्तरघरं पविसिअ वीसमीअदु भअवः । अहं उण  
भिक्षापआरं करोमि ।

॥ स्नातकः ॥ सोपहासं

३. भअवः पेक्ख पेक्ख ।

---

१. इदं शरीरं विरहेण युक्तं, प्राणास्तथा धर्मफलैकसाराः । सर्वं त्वदा-  
यत्तमुदारकीर्तं । का बाह्यवस्तुनि अस्ति अस्था ॥

२. तस्मादन्तरगृहं प्रविश्य विश्राम्यतां भगवान् । अहं पुनर्भिक्षाप्रकारं  
करोमि ।

३. भगवन् प्रेक्षस्व प्रेक्षस्व ॥

ज्योतिरीश्वर

प्रकाशमञ्जलिं बद्ध्वा

१ एदं सरीरं विरहेण जुत्तं ।

पाणा तथा धम्मफलैकसारा ।

सच्चं तुहाअत्तं उदारकित्ति ।

का वाहिरे वत्थुणि अत्थि अत्था ।

२ ता अन्तरघरं पविसिअ वीसमीअदु भअव्वं । अहं उण  
भिक्षापआरं करोमि ।

॥ स्नातकः ॥ सोपहासं

३ भअव्वं पेक्ख पेक्ख ।

---

१ इदं शरीरं विरहेण युक्तं, प्राणास्तथा धर्मफलैकसाराः । सर्वं त्वदा-  
युक्तमुदास्कीर्ते । का वाह्यवस्तुनि अस्ति आस्था ॥

२ तस्मादन्तरगृहं प्रविश्य विश्राम्यतां भगवान् । अहं पुनर्भिक्षाप्रकारं  
करोमि ।

३ भगवन् प्रेक्षस्व प्रेक्षस्व ॥

धूर्तसमागम

संस्कृतमाश्रित्य

पक्वाः कुन्तलराजयः कटकटाक्षामौ कपोलाबुभाव्  
एतस्याः स्तनमण्डलं निपतितं शुष्का नितम्बस्थली ।  
दृक्पातस्मितभाषितैः शिव शिव प्रस्तौति नेत्रोत्सवं  
किं ब्रूमः करवाम वेति किमियं दुष्टा जरत्तापसी ॥

विश्वनगरः

धिङ् मूर्ख किमसाधुजनोचितं प्रलपसि ॥

सुरतप्रियां प्रति

शुभे गम्बतां पाकशालां प्रति । वयमप्यागच्छन्त एवास्महे ॥

सुरतप्रिया

१ जं भअवं आणवेदि ॥

इति निष्क्रान्ता ॥

स्नातकः

२ मअवं जाव भिक्खा सिज्झदि ताव एत्थ ज्जेव भअवं

१ यद्भगवानाज्ञापयति ।

२ भगवन् यावद्भिक्षा सिध्यति तावदत्रैव भगवान् तिष्ठतु । अहं  
पुनरनङ्गसेनिकायाः प्रवृत्तिं ज्ञात्वा लघु आगच्छामि ॥



टिट्ठदु । अहं उण अणङ्गसेणिआए पउत्तिं जाणिअ लहुं आअ-  
च्छामि ॥

विश्वनगरः

वत्स सहैव गम्यतां ॥

इत्युभौ परिक्रामतः

॥ स्नातकः ॥

भअवं मूलणासअणाविदस्स गेहसणिहाणे अणङ्गसेणाए  
वासभवणं ति मए सुदं । ता तस्स ज्जेव अणुसारेण अणेसम्ह ॥

अग्रतोवलोक्य

भअवं पेक्ख पेक्ख । एसा अणङ्गसेणा सुरविलासिणी विअ  
विलोईअदि ॥

विश्वनगरः

तदागच्छाग्रतः । एनामुपसर्पवि ॥

भगवन् मूलनाशकनोपितस्य (गेहसंनिधाने) अणङ्गसेनाया वासंभवेन  
इति श्रुत्वा तस्मात् तस्यैवानुसारेणान्वेषामहे ॥ भगवन् प्रेक्षस्व प्रेक्षस्व ।  
एषानङ्गसेना सुरविलासिनीव विलोक्यते ॥

इत्येकान्ते स्थितौ । ततः प्रविशति अनङ्गसेना

॥ स्नातकः ॥ सहसोपसृत्य

१ भव्यं पेक्ख पेक्ख अणङ्गसेणाए लावणलच्छि ।

णीलम्भोरुहपत्तकन्तणअणा संपुण्णचन्द्राणणा ।

उत्तुङ्गत्थणभारभङ्गुरतणू वेइव्व मज्जे किंसा ।

बाला मत्तगइन्दमन्दगमणा सुन्देरसोहामई ।

णूणं पंचसरस्स मोहणलआ सिङ्गारसञ्जीवणी ॥

विश्वनगरः ॥ स्वागतं ॥

यन्नेत्राञ्जनभङ्गिलङ्गिमयस्मेराननाम्भोरुहा

यत् साकूतकलाविलासवसतिर्यत् कान्तरोमोद्गमा ।

मद्भावेङ्गितसंगतिं तनुलतामालोक्य गोपायति

प्रायस्तत् कथयत्यनङ्गरचनामङ्गे कृशाङ्गौ स्थितां ॥

१ भगवन्, प्रेक्षस्व प्रेक्षस्वानङ्गसेनायां लावण्यलक्ष्मीं । नीलाम्भोरुहपत्र-  
कान्तनयना सम्पूर्णचन्द्रानता । उत्तुङ्गस्तनभारभङ्गुरतनुर्वेदिरिव मध्ये  
कृशाङ्गः बाला मत्तगजेन्द्रमन्दगमना सौन्दर्यशोभामयी । नूनं पञ्चशरस्य  
मोहनलता शृङ्गारसंजीवनी ॥

प्रकाशं

सम्यगुपलक्षितं । तथा हि

यत् तीर्थाम्बु मुखाम्बुजासवरसो नेत्रे नवेन्दीवरै  
दन्तश्रेणिनखास्तताक्षतचयो दूर्वा च रोमावली ।  
उत्तुङ्गं च कुचद्वयं फलयुगं पत्रं कराम्भोरुहं  
तन्मन्ये मदनार्चनाहितमतिः स्वाङ्गोपहारैरियं ॥

अनङ्गसेनां लक्ष्मीकृत्यं ।

यत् पूर्वं रचितं तपः प्रतिदिन या तीर्थयात्रा कृता  
यद्भूमना पुरुषोत्तमार्चनविधौ चेतः कृतार्थीकृतं ।  
तस्यैतत् परमप्रमोदजनकं प्राप्तं फलं कर्मणस्  
तत् किं शास्त्रकथारसेन किमहो स्वर्गेण मोक्षेण वा ॥

इति कामावस्थां नाटयति

॥ स्नातिकं ॥ सहर्षवैराग्यं स्वगतं

एसो लम्पटो उन्दुरुविअरे सप्पो विअ पइठ्ठो । भोदु ।  
जुत्तिपहाणेहि वअरणेहि णिवारइस्सं ॥

१ एष लम्पट उन्दुरुविअरे सर्प इव प्रविष्टः । भवतु युक्तिप्रधानैर्वचनै-  
निवारयिष्यामि ॥ भगवन् त्वमुपेक्षितसंसारसौख्यो मोक्षैकपरायणः कथं एतादृशे  
मृगतृष्णासदृशे मदनरसे पतित्वा आत्मानं व्यापादयसि । निवर्त्यतां अस्माद्  
दुष्टगणिं काप्रसङ्गादिति ॥

भगवं तुमं उपेक्खिदसंसारसोक्खो मोक्खेक्कपरा-  
अणो कधं एअरिसे मअतिगहासरिसे मअणरसे पलिअ  
अप्पाअणं वावादेसि । णिअत्तीअदु इमादो दुट्ठगणिआपसंगादो  
त्ति ॥

॥ विश्वनगरः ॥ सावज्ञं

वत्स नैवं पश्यसि

यावद्दृष्टिर्मृगाक्षीणां न नरीनर्ति भङ्गुरा ।  
तावज्ज्ञानवतां चित्ते विवेकः कुरुते पदं ॥

॥ अनङ्गसेना ॥ विहस्य

भअवं धणाधीणो वखु अअं जणो । एत्थ अरंणरुदिअं  
कदुअ अप्पाणअं विडम्बेसि ॥

भगवन् धनाधीनः खलु अयं जनः । अत्र अरण्यरुदितं कृत्वात्मानं  
विडम्बयति ॥

विश्वनगरः

सन्यासिनामस्माकं कुतोर्थसंपत्तिः । तदस्मच्छरीरेण यथासुखं  
विनियोगः क्रियतां ।

सानुरागं

बाले मृणालदलकोमलबाहुदण्डे  
चण्डि प्रचण्डवदने मयि देहि दृष्टि ।  
एष त्वदीयवदनाम्बुजकृष्टचेता  
दीनो यतिः सपदि मज्जति कामसिन्धौ ॥

स्नातकः

भो भद्रं तुमं उपेक्षिदसंसारसोक्खो

इत्यादि पठति

॥ अनङ्गसेना ॥ संस्कृतमाश्रित्य

भगवन्नलमत्रात्यन्तानुसंधानेन ।

वागर्थं परिगृह्य मोक्षपदवीं ध्यायन्ति निर्मत्सराः  
शान्तप्रौढकुलीनहीनविषये सर्वत्र साधारणाः ।



रागद्वेषममत्वकर्षितधियो वेश्याः सुरा भिक्षवो ।  
वस्तुं नन्वपि नित्यमित्यहह किं कामार्णवे मज्जसि ॥

विश्वनगरः

प्रिये गृहाणास्मच्छरीरं ॥

इत्यञ्जले धारयति

॥ स्नातकः ॥ सहसोपसृत्य

१ अरे गण्डपरलो आ दुष्टपरिव्वात्र आ एसा पठमं अह्नपरि-  
गहेण तुह पुत्तबहु होदि । ता मुञ्च एणं ।

विश्वनगरः

धिङ् मुख एषास्मद्बधूस्त्वद्गुरुपत्नी मातृतुल्या च । तत्  
किमेनामनुबध्नासि ॥

॥ स्नातकः ॥ सक्रोधं

२ अरे रे लम्पडा एवं एवं भणन्तस्स दण्डप्पहारेण  
पक्कमालूरफलं विअ मुण्डं दे अत्थरं करइस्सं ॥

१ अरे नष्टपरलोक दुष्टपरिव्राजक एषा प्रथममस्मत्परिग्रहेण तव  
पुत्रबधूर्भवति । तस्माद् मुञ्चैनां ।

२ अरे रे लम्पट एवं एवं भणतो दण्डप्रहारेण पक्कमालूरफलमिव मुण्डं  
तव खंडशः करिष्यामि ॥

इत्यन्योन्यं कलहं कुरुतः

॥ अनङ्गसेना ॥ स्वगतं

१ कथं धूर्तहस्तपतिदक्षि । भोदु एवं ताव ॥

प्रकाशं

॥ ईश्वरानन्दस्य भो.

भो महाभागधेया तुम्हाणं एयारिसे महाविवादे असज्जाइ-  
मिस्सो पमाणीकरीअदु ॥

विश्वनगरः

प्रिये भवतु ॥

स्नोतकः

२ पिए दसटङ्का मए दादव्वा । ता तं गेण्हिअ मह  
मणोहरं संपादेहि ॥

---

१ कथं धूर्तहस्तपतितास्मि । भवतु एवं तावत् । भो महाभागधेयौ युष्मा-  
कमेतादृशे महाविवादे असज्जातिमिश्रः प्रमाणीक्रियतां ॥

२ प्रिये दशटङ्का मया दातव्याः । तस्मात् तद् गृहीत्वा मम मनोहरं  
संपादय ।

धूर्तसमागम

इति ग्रन्थिं दर्शयति

॥ विश्वनगरः ॥

अलं ग्रन्थिदर्शनेन । आगच्छतं । तत्रैव गच्छामः ॥

इति निष्क्रान्ताः सर्वे ॥

इति प्रथमाहः संधिः ॥

## द्वितीयोऽङ्कः

ततः प्रविशति असज्जातिमिश्रो विदूषकश्च

॥ असज्जातिमिश्रः ॥

सप्रमोदनं

त्रैलोक्ये भोजनं श्रेष्ठं ततोऽपि सुरतोत्सवः ।

भोजनं वास्तु वा नास्तु जीवनं सुरतं विना ॥

वत्स बन्धुवंचक आगच्छाधीष्व ॥

विदूषकः

१ जं मिस्सो आणवेदि ॥

असज्जातिमिश्रः

यद्वामावक्त्रपानं यदलसनयनालोकनं केलिरङ्गे

यः स्यादप्यङ्गसङ्गः कुचकलससमुत्पीडने बाहुभङ्गिः ।

एतत् संसारसारं कुरु निजहृदये निर्विकल्पैककल्पं

किं ते कार्यं विवादवधितऋजुमतिग्रन्थकन्थाभरेण ॥

१ यद् मिश्र आशापयति ।

॥ विदूषकाः ॥

१ भो मिश्र पराङ्गनासंभोगादपि परमन्दिरे संधि  
कदुश्च जं अत्यो अवाहीत्यदि तं ज्जंवि तिस्र्यगामारं । पेक्ख  
पेक्ख ॥

किं वाणिज्जेण कज्जं गिअधणविलयं तं क्वु काउण दुक्खं  
किंवा कज्जं किंसीण पशुवसुगिअमायासगिकज्जदाए ।  
किं विज्जाए फलं वा मरणममममुत्पण्णचिन्ताउत्ताए •  
एकं तेज्जोअसारं परधणहरणं जूअकीलासुहं च ॥  
ता एत्थ धुत्तउरणअरे जादिसो तुमं गुरु तादिसो  
अहं सिस्सो संवुत्तो ॥

॥ असज्जातिमिश्रः ॥

अहो अस्मिन् नगरे निरुपधिजीवनतास्मद्विधश्रोत्रियाणां ।

१ भो मिश्र पराङ्गनासंभोगादपि परमन्दिरे संधि कृत्वा यदर्थविद्विषते  
तदेव त्रिभुवनसारं । प्रेक्षस्व प्रेक्षस्व । किं वाणिज्येन कार्यं निजधनविलयं तं खलु  
कृत्वा दुःखं किं वा कार्यं कृष्या पशुवसुनियमायासनिष्कायतया । किं विद्यायाः  
फलं वा मरणश्रमसमुत्पन्नचिन्ताकुलायाः एकं त्रैलोक्यसारं परधनहरणं धूत-  
क्रीडासुखं च ॥ तदत्र धूतपुरनगरे यादृशस्त्वं गुरुस्तादृशोहं शिष्यः  
संबुतः ॥



दिनाष्टतयादारभ्य न कश्चिन्न्यायवादी न कपटश्राद्धप्रतिलम्भा  
न च गणिकालापः ॥

नेपथ्ये

विज्ञाप्यतां मिश्रस्य स्थाने न्यायकरणार्थं वादिनौ द्वारि  
वर्तेते ॥

॥ असज्जातिमिश्रः ॥

• वत्स बन्धुवंचक प्रवेशय वादिनौ

विदूषको निष्क्रम्य विश्वनगरस्नातकानङ्गसेनाभिः सह पुनः प्रविशति ।

असज्जातिमिश्रः ॥ विश्वनगरस्नातकौ निरीक्ष्य स्वगतं

कथमनर्थान्तरमापतितं ॥

\* प्रकाशः

भगवन्नागन्तुका वयं । तन्नात्र भिक्षावसरः ।

॥ विदूषकः ॥

१ भो मिस्स एदे ज्जेव वादिणो । एदाणं विवादं विचारेदु  
मिस्सो ॥

१ भो मिश्र एतावेव वादिनौ । एतयोर्विवादं विचारयतु मिश्रः ॥

॥ असज्जातिमिश्रः ॥ सहर्षं सगौरवं च  
 आसनमुपनीयतां भगवते स्नातकाय च ॥  
 विदूषकस्तथा कृत्वा सर्वान् उपवेशयति

॥ असज्जातिमिश्रः ॥

कोऽर्थी कः प्रत्यर्थी ॥

स्नातकः

१ भासाए अहं अर्थी शिञ्जरकरणे भञ्जवं ॥

असज्जातिमिश्रः

न्यायवादिनः प्रथमतो निकरः पश्चाद्भाषोत्तरे ॥

विश्वनगरः

अयमस्मत्संन्यासदण्डो निकरः ॥

स्नातकः

२ एदं मे इन्दासणकोल्लिअं शिञ्जरकरणेपविणीअदु ॥

१ भाषायामहमर्थी निकरकरणे भगवान् ।

२ इदं मे इन्द्राशतकौलिकं निकरकरणे प्रविनीयतां ।

॥ असज्जातिमिश्रः ॥ सगौरवं गृहीत्वा सप्रमोदमाघ्रय

किञ्चिद्विनियुज्यते

निद्राकरं दोषविनाशहेतु

क्षुधाकरं बुद्धिविकाशकं च ।

इन्द्राशनं कामबलानुकूलं

लब्धं मया दैववशादिदानीं ॥

विश्वनगरः

स्वाधीनयौवना सुभ्रूः सा मान्या सर्वकामिनां ।

अस्माभिरियमाक्रान्ता मदीया तेन वल्लभा ॥

॥ असज्जातिमिश्रः ॥ भाषां भूमौ लिखित्वा स्नातकं प्रति

स्नातक सत्वरमुत्तरं कुरु ॥

स्नातकः

१ एसा पुर्वं मए दिट्ठा दाऊण दसट्ठक्या ।

आणीदा अ मदिं दाइं मदीया तेन वल्लहा ॥

१ एसा पूर्वं मया दृष्टा दत्वा दराट्ठकान् । आनीता च मतिं दयितां  
मदीया तेन वल्लभा ॥

असज्जातिमिश्रः

उत्तरमभिलिख ॥

विदूषकः

१ भो मिस्स पेक्ख पेक्ख अणङ्गसेणाए लावणालच्छि ।

मअलंछणविम्बफुरन्तमुही ।

णअणुप्पलचंचलकेलिकिही ।

थणभारणआ अइमज्झकिसा ।

पठमोदिअचन्दकलासरिसा ॥

असज्जातिमिश्रः ॥ अनङ्गसेनामालोक्य

अहो निर्माणवैदग्धी विधातुः । तथा हि

नीलोल्लसल्ललितखञ्जनमञ्जु नेत्रा

सम्पूर्णशारदकलानिधिकान्तवक्त्रा ।

बाला जगत्त्रितयमोहनदिव्यमूर्तिर

मन्ये विभाति जगति स्मरधीरकीर्तिः ॥

१ भो मिश्र प्रेक्षस्व प्रेक्षस्वानङ्गसेनाया लावण्यलक्ष्मी । मृगलञ्छुन  
विम्बस्फुरन्मुखी । नयनोत्पलवञ्चलकेलिनिधिः । स्तनभारनतातिमध्यकृशा ।  
प्रथमोदितचन्द्रकलासदृशा ।

भो वादिनौ एषा विवादाध्यासितानङ्गसेना जयपराजयं  
यावत् मध्यस्थस्थाने स्थाप्यतां । एवंविधे च माध्यस्थ्ये वयमेव  
नृपतिव्यवस्थिता मध्यस्थाः ।

अनङ्गसेनामानीय स्वसंनिधावुपवेश्य तदीयकरं हृदये

निधाय सप्रमोदं

विकचकमलकोषश्रीरियं काम्यभूतिर-  
हिमकरकरजातचन्द्रकान्ताद्धि शीतः ।  
मृगमदघनसारासंगसौरभ्यभव्यो  
हरति मदनतापं कोमलः पाणिरस्याः ॥

क्षणं विचार्य उच्चैर्विहस्य

भो वादिनौ एतद्राज्यक्षेत्रेभुजङ्गयोरिव युवयोर्विवादः ॥

नथा हि

नैषा त्वदीया भवतोपि नेयं  
मत्संनिधिष्ठा सुभगा मदीया ।



स्वप्नेपि पूर्वं मयि ज्ञातकेलि  
स्ततोपि हेतोः खलु वल्लभा मे ॥

॥ विदूषकः ॥ अनङ्गसेनामालोक्य जनान्तिकं

१ भो सुन्दरि एसो मिस्सो वुद्धो भअवं णिद्धणो सिणादओ  
इछारअणो । ता एदाणं समागमं परिहरिअ अम्हसमागमेण  
तुह जोव्वणं सफलं भोदु ॥

इत्यात्मानं दर्शयति

॥ अनङ्गसेना ॥ सस्मितं

२ एदं धुत्तसमागमप्रहसणं संवृत्तं ॥

॥ विश्वनगरः ॥ सवैराग्यं

वत्स दुराचार न हि जलौकसामङ्गो जलौका लगति ।  
मूलनाशकस्यायं विचारः । तदेहि सुरतप्रियाया एव भवनं  
गच्छाव ॥

---

१ भो सुन्दरि एष मिश्रो वृद्धो भगवान् निर्धनः स्नातक इच्छारचनः ।  
तस्मादेतेषां समागमं परिहृत्य अस्मत्समागमेन तव यौवनं सफलं भवतु ।

२ एतत् धूर्तसमागमप्रहसनं संवृत्तं ॥

इति निष्क्रान्तौ । ततः प्रविशति अपटीक्षेपेण मूलनाशकः

॥ मूलनाशकः ॥

<sup>१</sup> अले अले अण्डगशेणिए जाणिदे तुम्ह चलिदं ज  
वालं वालं कअमअणमन्दिलकखौलवेदणं पत्थन्ते बहुवालं  
हग्गे तए पआशिदे । ता शंपदं पअच्छ । अण्णधा लाअदोहाइं  
दाव दाइशं ॥

अनङ्गसेना

<sup>२</sup> मूलनासअ संपदं ज्जेव असज्जाइमिस्सादो तुह दाइस्सं ।  
ता सुत्थो होहि ॥

विदूषकः

<sup>३</sup> को एसो दुट्ठदसणो दुट्ठचरिदो दुट्ठवअणो ॥

<sup>१</sup> अरे अरे अनङ्गसेनिके शार्तं तव चरितं । यद् वारं वारं कृतमदनमन्दि-  
रक्षौरवेतनं प्रार्थयन् बहुवारमहं त्वया प्रकाशितः ॥ तस्मात् सांप्रतं प्रयच्छ ।  
अन्यथा राजद्विधानि तव दास्यामि ॥

<sup>२</sup> मूलनाशक सांप्रतमेव असज्जातिमिश्रान् तव दास्यामि । तस्मात्  
सुस्थो भवं ॥

<sup>३</sup> क एष दुष्टदर्शनो दुष्टचरितो दुष्टवचनः ॥

असज्जातिमिश्रः

एष किं भगवद्गोचरः । पश्य

छिन्नौष्ठनासो गलगण्डनम्रो

वामान्निकाणो गलितैकहस्तः ।

शिलीषद्व्यापृतदक्षिणाङ्घ्रिः

स मूलनाशः किल नापितोसौ ॥

मूलनाशकः सहस्रोपसृत्य सर्वेषां सप्रमाणमादर्शं दर्शयति ,

असज्जातिमिश्रः

मूलनाशकं क्रियतामस्माकं नखलोम्नां परिष्कारः ॥

मूलनाशकः

१ पठमं वेदनं पञ्चछ ॥

असज्जातिमिश्रः

मूलनाशकं किमर्थं ॥

मूलनाशकः

२ भो यदि तुमं पलिकखलन्ते पठमं ज्जेव मलिशशशि ता  
वेदनं किण पइछिदव्वं ॥

१ प्रथमं वेदनं प्रयच्छ ।

२ भो यदि त्वं परिस्खलन् प्रथमं मरिष्यसि तदा वेदनं केन प्रयन्तव्यं ॥

असज्जातिमिश्रः

अलं परिहृसेन । गृह्यतामिदं पास्तोषिकं ॥

इति कौलिकादाकृष्य गुञ्जाकिनीं ददाति । मूलनाशकः सगौरवं  
गृहीत्वा सप्रमोदं आघ्राय किञ्चिद्विनियुज्य च मिश्रस्य करचरण-  
योर्बन्धनं कृत्वा व्यापारं नादयति

॥ असज्जातिमिश्रः ॥ सुवेदनं

दलति हृदयमेतन्मोहमभ्येति चेतः

स्फुटति सकलदेहे कीकसन्नित्संधिः ।

विरम विरम शिल्पान्मूलनाश त्वमस्मात्

शिव शिव शिव सद्यो जीवनं कुर्वतीव ॥

इति मोहमुपगतः

॥ मूलनाशकः ॥ चालयित्वा

१ कथं मलिदे अशज्जाइमिश्रं लहू लहू अबकमिश्रं ॥

इति निष्क्रान्तः

१ कथं मृतोऽसज्जातिमिश्रः । लघु लघु अपक्रमिष्यामि ॥



धूर्तसमागम

॥ विदूषकः ॥ मिश्रस्य करचरणयोर्वन्धनमपनीय

१ भो आणवेदु मिसोअवरं हु तुह पिअं गिवाहइस्सं ॥

॥ असज्जातिमिश्रः ॥ संज्ञां लब्ध्वा

राष्ट्रं समस्तं कपटेन भुक्तं

धूर्तक्रियाभिर्दयेतयमाप्ताः

भवान् विनीतो मिलितश्च शिष्यः ।

नातः परं नः प्रियमस्ति लोके ॥

तथापीदमस्तु ।

काले संततवर्षिणो जलमुत्थः शस्यैः समृद्धा धरा ।

भूपाला निजधर्मपालनपरा विप्रास्त्रयीनिर्भराः ।

स्वादुक्षीरनतोदसः प्रतिदिनं गावो निरस्तापदः ।

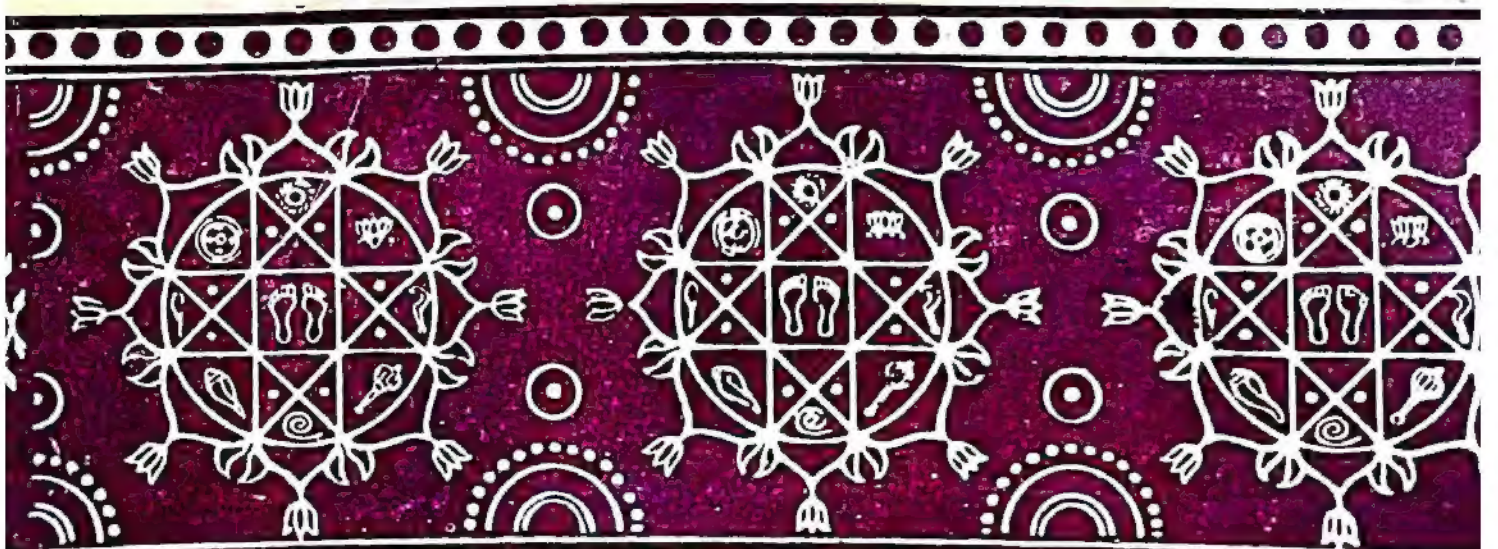
सन्तः शान्तिपरा भवन्तु कृतिनः सौजन्यभाजो जनाः

इति निष्क्रान्ताः सर्वे

इति श्रीकविशेखराचार्यज्योतिरीश्वरविरचितं धूर्तसमागमं नाम

प्रहसनं समाप्तं ॥

१ भो आज्ञापयतु मिश्रः । अपरं खलु तव प्रियं निर्वाहयिष्यामि ॥



স্বাধীন ভারতীয় মেয়িনী মাঠি মমিতি  
'জীবজি' . প্রয়াগ-২